कथाकार प्रेमचंद और दलित संवेदना

–डॉ.अम्बिली.वी.एस

दलित मुंशी प्रेमचंद के जीवन और साहित्य का अविभाज्य अंग था. वे दलितों के साथ उठते–बैठते, खाते–पीते और उनकी लड़ाइयों में हिस्सा लेते थे.हरिजन या दलितों को लेकर प्रेमचंद की अवधारणा राजनीतिक ज़रूरत के अनुसार गिनी–चुनी अछूत जातियों तक सीमित नहीं थी.जो भी रौंदा–कुचला और दब गया है उनकी नज़र में दलित है.यही वजह है कि उनके कथा–चरित्रों में भंगी,चमार,दुसाध,मुसहर आदि सभी पिछड़ी जातियाँ हैं,वहाँ इकहरापन नहीं है. शोषण और उत्पीड़न का रूप सीमित भी नहीं है.उनकी कहानियों में दलितों के मुक्ति–संघर्ष की चेतना भरपूर नज़र आती है.उनकी घासवाली,स्वामिनी,प्रेम का उदय बालक,सती जैसी कहानियों में दलित स्त्रियों की संवेदना और उनका विद्रोह है. प्रेमचंद ने हिन्दू धर्म और धन के बीच सांठ–गाँछ को पहचानते हुए बार–बार धार्मिक व्यवस्था और पुरोहित–महंत की खिल्ली उडाई. एक कथाकार की हैसियत से प्रेमचंद ने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों में दलित जीवन का मार्मिक वर्णन किया है. प्रेमचंद दलित नहीं थे , उनका साहित्य दलित साहित्य भी नहीं कहा जा सकता. वे आत्मकथात्मक दलित साहित्य नहीं लिख सकते थे, पर उनमें दलित यथार्थ की व्यापक चेतना थी. उनकी कहानियों में दलितों के मानवाधिकार और आर्थिक मुक्ति का संघर्ष बुलंद है. ठाकुर का कुआं,सद्गति,मंत्र, मंदिर,घासवाली,बाबाजी का भोग,दूध का दाम,सवा सेर गेहूँ,लांछन,गुल्ली डंडा,कफ़न आदि में दलितों की समस्याओं से संबन्धित अनेक आयाम उपलब्ध होते हैं. 'ठाकुर का कुआं' में गंगी पानी नहीं ले पाती. 'मंदिर' में सुखिया मंदिर में घुस नहीं पाती और बच्चा दरवाजे के बाहर ही दम तोड़ देता है. 'दूध का दाम' का लड़का मंगल खेल में बराबरी का हिस्सा मांगता है, न मिलने पर पहले अकड़कर चला जाता है और भूख लगने पर जूठन खाने केलिए फिर उसी दरवाजे पर अपने कुत्ते के साथ आ खड़ा होता है. 'सद्गति' का दुखी चमार और 'कफ़न' के घीसू–माधव सामाजिक बहिष्कार, अपमान और यंत्रणा से निकलने की जद्दोजहद में फंसे रहते हैं.

प्रेमचंद के कथा साहित्य में अछूतों को केंद्र पात्र बनाना हिन्दी नवजागरण के अधूरेपन को थोडा–बहुत भर देता है. प्रेमचंद लक्षित करते हैं कि भारत में राष्ट्रीयता की नींव सबसे अधिक कमज़ोर है. महंतों और धर्माचार्यों को राजनैतिक शासन भले न हो,पर उनका मनोवैज्ञानिक शासन ज़बर्दस्त है. देश के करुण विकास के किसी मोड़ पर राजनैतिक सत्ता हथियाना उनकेलिए असंभव काम नहीं है. 'सद्गति' में दुखी चमार को अपने पवित्र अधिकार से बेगार कराना और उसके मर जाने से अधिक लाश की चिंता करना कितना भयावह

है. वह एक आस्थावान दलित था,धार्मिक व्यवस्था के संस्कारों से जकड़ा हुआ भी था. जब उसकी औरत और कन्या चमार की लाश पर दहाड़े मारकर रो रही थीं,पंडितायन कहती है,"चमार का रोना मनहूस है....इन डायनें ने तो खोपड़ी चाट डाली. सभों का गला भी नहीं पकता."(प्रेमचंद,सद्गति) सामंती धार्मिक व्यवस्था की संवेदनहीनता अपने चरम पर पहुँच जाती है कि दलित को दुखड़ा रोना तक मना है. दलित को कोई पानी केलिए भी नहीं पूछा था,क्योंकि परंपरागत धार्मिक व्यवस्था के प्रमुख गुण मानवीय करुणा,त्याग.मैत्री और सादगी का बुरी तरह से क्षय हो चूका है.

प्रेमचंद ने दलितों की हीन और असहाय अवस्था का ही चित्र नहीं खींचा,उनकी बेचैनी और प्रतिरोध के दृश्य भी खींचे थे. 'दूध का दाम' कहानी में दलित की त्रासद नियति है,पर बावजूद इसके हक़ की आवाज़ भी उठती है.अछूत मंगल बाबू साहब का बेटा सुरेश घोडा बनकर ढ़ोने से इनकार करता है.वह खेल में बराबर का हिस्सा मांगते हुए कहता है,"मैं कब कहता हूँ की भंगी नहीं हूँ,लेकिन तुम्हें मेरी ही माँ ने दूध पिलाकर पाला है,जब तक मुझे भी सवारी करने को नहीं मिलेगी,मैं घोडा नहीं बनूंगा.तुम लोग बड़े चघड हो.आप तो मज़े से सवारी करेंगे और मैं घोडा ही बना रहूँगा."(प्रेमचंद,दूध का दाम) वह भगा दिया जाता है,पर खेल के माध्यम से ही सही मंगल अपना हक़ बता देता है.लेकिन वह उदास भी हो जाता है कि अब बाबू साहब की घर की भेंगी जूठन उसे नहीं मिलेगी और उसे भूखा रहना पड़ेगा.अंततः उसके स्वाभिमान पर भूख की ही जीत होती है.

'ठाकुर का कुआँ' प्रेमचंद की दलित चेतना युक्त सर्वश्रेष्ठ कहानी मानी जा सकती है.इसमें प्रेमचंद दलितों के असली वक्ता बनकर आते हैं.इस कहानी का मूल तत्व यह है कि इंसान होने की हैसियत से दलितों को जीने केलिए प्रकृति प्रदत्त चीज़ों पर भी अधिकार नहीं दिया जाता है.इस कहानी का प्रमुख पात्र जोखू बीमार है. जोखू को बचाने केलिए उसकी पत्नी गंगी सवर्णों के कुएँ से पानी लाने निकलती है.मगर जोखू सवर्णों के रवैये को जानता है और पत्नी को रोककर कहता है,"हाथ–पाँव तुडवा आएगी और कुछ न होगा.बैठ चुपके से.ब्राह्मण देवता का आशीर्वाद देंगे,ठाकुर लाठी मारेंगे,साहू तक के चार लेंगे.गरीबों का दुःख–दर्द कौन समझता है?हम तो मर भी जाते हैं तो कोई द्वार पर झाँकने नहीं आता,कन्धा देना तो बड़ी बात है.ऐसे लोग क्या कुएँ से पानी भरने देंगे?"(ठाकुर का कुआँ ,प्रेमचंद) इसकी प्रतिक्रिया में गंगी विद्रोह कर चीखती है,"हम क्यों नीच हैं और ये लोग ऊंचे क्यों हैं? चोरी ये करें,चाल–फरेब ये करें."(वही)किसी दलित स्त्री का ऐसा विद्रोही स्वर सदियों की गुलामी की प्रतिक्रिया ही कहा जा सकता है.

'वरदान'उपन्यास में प्रेमचंद पिछड़ी जाति के लोगों के प्रति बड़े ही भावुक नज़र आते हैं.इसमें प्रेमचंद दलित–वक्ता बनकर सामने आते हैं,"क्यों वे मनुष्य नहीं हैं? इश्वर ने उन्हें नहीं बनाया ?" (प्रेम्चंद,वरदान,पृ.सं.१४५) 'प्रेमाश्रम' का प्रेमशंकर बेगार का विरोध करता है और दलितों को उनके मानव होने के अधिकारों केलिए लड़ने की प्रेरणा देता है. प्रेमशंकर के हस्तक्षेप के कारण चमारों में जागरण आता है और वे अपनी मजदूरी मांगने की जुर्रत कर बैठते हैं तथा सवर्णों द्वारा होनेवाले अमानवीय अत्य्याचार कप्रतिरोध करते हैं. दलित विमर्श का एक पहलु 'प्रेमाश्रम' के बलराज के चरित्र में भी मिलता है.हलवाहा रंगी चमार के प्रति उसका व्यवहार मानवतापूर्ण दिखायी देता है.जब विलासी बलराज को दूध देती है और रंगी को नहीं देती,तब वह बुरी तरह से बिगड़ता है और दूध का कटोरा फेंक देता है. बलराज का यह कथन दलितोंके मूलभूत अधिकारों पर जोर देता है–"जो हमसे अधिक काम करता है उसे हमसे अधिक खाना चाहिए. हमने तुमसे बार–बार कह दिया है कि रसोई में जो कुछ थोडा बहुत हो,वह सबके सामने आना चाहिए.अच्छा खाएं तो सब खाएं,बुरा खाएं तो सब खाएं,लेकिन तुम्हें न जाने क्यों यह बात भूल जाती है?रंगी कोई बेगार का आदमी नहीं है.वह मुँह से चाहे न कह सके,पर मन में अवश्य कहता होगा कि छाती फाड़कर काम मैं करूँ और मूंछों पर ताव देकर खाएं ये लोग.ऐसा दूध–घी खाने पर लालत है."(प्रेमचंद,प्रेमाश्रम,पृ.६१–६२)

'रंगभूमि' उपन्यास का नायक चमार सूरदास है.अन्याय देखकर उससे न रहा जाता था,अनीति उसकेलिए असह्य थी.इस उपन्यास में एक अछूत को इतना प्रतिष्ठित करके प्रेमचंद यही दिखाना चाहते हैं कि अछूत भी राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन में सम्मिलित होकर मान्यता प्राप्त कर सकते हैं. 'गोदान' हाशियेकृत भारतीय किसानों की महागाथा है.इसका नायक होरी सामंती व्यवस्था, पूंजीवादी सभ्यता,जाति प्रथा आदि द्वारा आजीवन ऋण का बोझ उठाने केलिए अभिशप्त भारतीय किसानों का प्रतिनिधि है.दुखद बात है कि आज भी किसानों की दुर्दशा में कोई सुधार नहीं आया है. दलित किसान शोषण और अन्याय की चक्की में कैसे पीसे जा रहे हैं उसका चित्रण 'कर्मभूमि' में प्रस्तुत किया गया है. सामंती व्यवस्था ने आर्थिक–सामाजिक विषमता को कायम रखने केलिए धर्म को एक औजार के रूप में इस्तेमाल किया है. इसके तरकश में अछूतों और गरीबों केलिए एक से बढ़कर एक तीर है. जब दलितों को उपयुक्त वेतन या भरपेट भोजन नहीं मिलता तो वे इसके विरुद्ध आवाज़ उठाते हैं. उनकी भी चेतना प्रस्फुटित होती है.

तीसरे दशक के अंत तक आकर मंदिर प्रवेश की समस्या गंभीर रूप धारण कर रही थी. 'कर्मभूमि' में इस समस्या को व्यापक ढंग से उठाया गया है. डॉ.शान्तिकुमार सुखदा, रेणूकादेवी, समरकान्त, सकीना की बूढी माँ, नैना आदि पात्रों के द्वारा शहरमें मंदिर प्रवेश आन्दोलन चल रहा है. डॉ.शान्तिकुमार का यह

कथन दलितों में नवजागरण लानेवाला है– "क्या तुम इश्वर के घर से गुलामी का बीड़ा लेकर आये हो ? तुम तन–मन से दूसरों की सेवा करते हो, पर तुम गुलाम हो.तुम्हारा समाज में कोई स्थान नहीं. तुम समाज की बुनियाद हो. तुम्हारे ऊपर समाज खड़ा है, पर तुम अछूत हो. तुम मंदिर में नहीं जा सकते, ऐसी अनीति इस अभागे देश के सिवा और कहाँ हो सकती है ? क्या तुम सदैव इसी भांति पतित और दलित बने रहना चाहते हो...? मंदिर किसी एक आदमी या समुदाय की चीज़ नहीं है. मत चलो उस मंदिर के द्वार से, चाहे तुम्हारे ऊपर गोलियों की वर्षा ही क्यों न हो ? " (प्रेमचंद,कर्मभूमि,पृ.१६०) असल में दलितों में एक नवचेतना लाना ही प्रेमचंद का लक्ष्य रहा है .

आज़ादी के इतने वर्षों बाद भी पिछड़ी जाति के लोगों का उपयोग महज एक'वोट बैंक के रूप में हो रहा है. लगता है कि दलितों का अपना कोई वजूद नहीं है. अस्पृश्यता अब शारीरिक से ज्यादा मानसिक हो गयी है. सवर्ण कदापि इस योग्य नहीं कि समाज के किसी अंग को नीच या तुच्छ समझें. यहाँ डॉ.कान्तिमोहन के विचार संदर्भानुकूल हैं, "चार करोड़ अछूतों से अमानवीय व्यवहार करनेवाले सवर्ण भारतीय अंग्रेजों से स्वराज्य की मांग कैसे कर सकते हैं? सभ्य संसार के सामने भारतीय समाज के इस कोढ़ को पेश करते हुए अंग्रेज़ और अन्य साम्राज्यवादी तत्व भी यह साबित करने की जोड़–तोड़ में लगे थे कि वे लोग समानता और स्वतंत्रता का दावा कैसे कर सकते हैं जो अपने ही देशवासियों के एक बड़े हिस्से को ये अधिकार देने केलिए तैयार नहीं." (डॉ.कान्ति मोहन, प्रेमचंद और अछूत समस्या, पृ.१८६–१८७) प्रेमचंद के कथा साहित्य में दलित समस्या गरीबी और शोषण से अभिन्न रूप से जुडी हुई है. इस अमानवीय जाति भेद का प्रेमचंद अपनी रचनाओं के ज़रिए पूरी शक्ति से विरोध करते थे.

समग्रत: यह कह सकते हैं कि प्रेमचंद ने हाशिए कृत दलित वर्ग का पक्षधर होकर उनके प्रति सहानुभूति दिखाई थी. वे उनकेलिए आवाज़ उठाते थे. उनकी कृतियाँ सामाजिक परिवेश में अछूतों के जीवन के अन्तर्विरोध एवं अंतर्संबंधों को बड़ी सहजता से अभिव्यक्त करती हैं. दलित न होने के बावजूद भी प्रेमचंद ने दलित जीवन के मर्म का इतनी व्यापकता और कुशलता से उद्घाटन किया कि अभी तक उनका साहित्य मील का पत्थर है.

———————————————————————

–डॉ.अम्बिली.वी.एस., सहायक आचार्या, हिन्दी विभाग, एन.एस.एस कॉलेज, पन्दलम, पत्तनमतिट्टा (जिला), केरल Mobile: 9496499962, Email: ambilivs78@gmail.com